National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 14-09-2020; Accepted: 23-09-2020; Published: 16-11-2020
www.nationaljournals.com
Volume 5; Issue 4; 2020; Page No. 19-22

स्वामी विवेकानन्द का राष्ट्रवादः एक विष्लेषणात्मक अध्ययन

प्रभाकर झा
सहायक प्राध्यापक, आर0बी0 जलान महाविद्यालय, बेला, दरभंगा, बिहार, भारत

सारांश
राष्ट्रवाद पर विवेकानंद के विचार भौगोलिक या राजनीतिक या भावनात्मक एकता पर आधारित नहीं है, न ही इस भावना पर कि 'हम भारतीय हैं। राष्ट्रवाद पर उनके विचार गहन आध्यात्मिक है। उनके अनुसार यह लोगों का आध्यात्मिक एकीकरण, आत्मा की आध्यात्मिक जागृति है। उन्होंने प्रचलित विविधता को विभिन्न आधारों पर पहचाना और सुझाव दिया कि भारतीय राष्ट्रवाद पश्चिम की तरह पृथकतावादी नहीं हो सकता है। उनके अनुसार भारतीय लोग गहन धार्मिक प्रकृति के हैं और इससे एकजुट होने की शक्ति प्राप्त की जा सकती है। राष्ट्रीय आदर्शों के विकास से उद्देश्य और कार्यवाही में एकता प्राप्त की जा सकती है। उन्होंने करुणा, सेवा और त्याग को राष्ट्रीय आदर्शों के रूप में मान्यता दी। इसलिए विवेकानंद के लिए राष्ट्रवाद सार्वभौमिकता और मानवता पर आधारित है। उनका मानना था कि प्रत्येक देश में एक ऐसा प्रभावी सिद्धांत होता जो उस देश के जीवन में समग्र रूप से परिलक्षित होता है और भारत के लिए यह धर्म था। धर्मनिरपेक्षता पर आधारित पश्चिमी राष्ट्रवाद के विपरीत स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवाद का आधार धर्म, भारतीय आध्यात्मिकता और नैतिकता थी। भारत में आध्यात्मिकता को सभी धार्मिक शक्तियों के संगम के रूप में देखा जाता है।

मूल शब्दः राष्ट्रवाद, विवेकानंद, धर्मनिरपेक्षता, सार्वभौमिकता एवं भारतीय

प्रस्तावना
राष्ट्रवाद किसी देश के प्रति निष्ठा या राष्ट्रीय चेतना की भावना के रूप में परिभाषित किया जाता है। उस देश को अन्य देशों से ऊपर रखता है। यह मुख्य रूप से अन्य देशों या अंतरराष्ट्रीय समूहों की तुलना में अपनी राष्ट्रीय संस्कृति और हितों को बढ़ावा देने पर बल देता है। राष्ट्रवाद पर विवेकानंद के विचार भौगोलिक या राजनीतिक या भावनात्मक एकता पर आधारित नहीं है, न ही इस भावना पर कि 'हम भारतीय हैं। राष्ट्रवाद पर उनके विचार गहन आध्यात्मिक है। उनके अनुसार यह लोगों का आध्यात्मिक एकीकरण, आत्मा की आध्यात्मिक जागृति है। उन्होंने प्रचलित विविधता को विभिन्न आधारों पर पहचाना और सुझाव दिया कि भारतीय राष्ट्रवाद पश्चिम की तरह पृथकतावादी नहीं हो सकता है। उनके अनुसार भारतीय लोग गहन धार्मिक प्रकृति के हैं और इससे एकजुट होने की शक्ति प्राप्त की जा सकती है। राष्ट्रीय आदर्शों के विकास से उद्देश्य और कार्यवाही में एकता प्राप्त की जा सकती है। उन्होंने करुणा, सेवा और त्याग को राष्ट्रीय आदर्शों के रूप में मान्यता दी। इसलिए विवेकानंद के लिए राष्ट्रवाद सार्वभौमिकता और मानवता पर आधारित है।

उनका मानना था कि प्रत्येक देश में एक ऐसा प्रभावी सिद्धांत होता जो उस देश के जीवन में समग्र रूप से परिलक्षित होता है और भारत के लिए यह धर्म था। धर्मनिरपेक्षता पर आधारित पश्चिमी राष्ट्रवाद के विपरीत स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवाद का आधार धर्म, भारतीय आध्यात्मिकता और नैतिकता थी। भारत में आध्यात्मिकता को सभी धार्मिक शक्तियों के संगम के रूप में देखा जाता है। यह माना जाता है कि यह इन सभी शक्तिओं को राष्ट्रीय प्रवाह में एकजुट करने में सक्षम है। उन्होंने मानवतावाद और सार्वभौमिकता के आदर्शों को भी राष्ट्रवाद के आधार के रूप में स्वीकार किया। इन आदर्शों ने लोगों का स्व–प्रेरित बंधनों और उनके परिणामी दुखों से मुक्त होने हेतु पथप्रदर्शन किया है।

12 जनवरी 1863 को कलकत्ता मे नरेन्द्रनाथ का जन्म होना फिर स्वामी रामकृष्ण परमहंस के संपर्क में आकर बालक नरेंद्र का स्वामी विवेकानंद बन जाना एक अलग कहानी है। उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है शिकागो विश्व धर्मसंसद में धर्म और राष्ट्रवाद पर दिया उनका भाषण।1893 को शिकागो में आयोजित विश्व धर्म संसद में स्वामी विवेकानंद द्वारा अपने विश्व प्रसिद्ध भाषण में भारत में राष्ट्रवाद की जिस चेतना को जागृत किया था वह चेतना गुलाम भारत में उस राष्ट्र के पुनरुत्थान के लिए अति आवश्यक थी, जिस राष्ट्र की बहुसंख्यक जनता अपने समग्र संसाधनों और पूर्ण एकजुटता से 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों के विरुद्ध लड़कर पराजित हो चुकी थी।

भारत के मूल निवासी जिन्हें हम आदिवासी और वनवासी के नाम से जानते हैं वह 19 वीं सदी के प्रारंभ से ही जंगलों के अवैज्ञानिक दोहन और जंगलों में आदिवासियों के परंपरागत अधिकारों से उन्हें वंचित करने के कारण अंग्रेजो के विरुद्ध पहले ही कई बार विद्रोह का बिगुल बजा चुके थे। इन आदिवासियों मे प्रमुख कोल, संथाल, भील आदि जातियों ने अलग–अलग स्थानों और समय में अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह किया. इन सभी विद्रोहों को अंग्रेजों ने भीषण दमन के बाद कुचल दिया. परिणामस्वरूप एक राष्ट्र के रूप में भारत की चेतना तब इतनी कुंद हो चुकी थी, मनोबल इतना गिर चुका था कि उन्हें इस बात का यकीन ही नहीं था कि भारत अंतरराष्ट्रीय मंच पर एक राष्ट्र के रूप में कभी स्वीकार भी किया जा सकता है।

ऐसी घनघोर हताशा और निराशा के बीच विश्व धर्म संसद में अपनी आध्यात्मिक शक्ति से दुनिया को नई राह दिखाने का जो वक्तव्य विवेकानंद ने शिकागो की धर्म संसद में किया उससे समस्त भारत में एक नई चेतना और एक नए आत्मविश्वास का संचार हुआ। उस धर्म संसद में भारत की शक्ति का स्रोत उसकी धार्मिक सहिष्णुता और धर्म में सार्वभौमिक स्वीकृति को बताया। विवेकानन्द ने कहा "मुझे गर्व है कि मैं उस धर्म से हूं जिसने दुनिया को सहिष्णुता और सार्वभौमिक स्वीकृति का पाठ पढ़ाया हम सिर्फ सार्वभौमिक सहिष्णुता पर ही विश्वास नहीं करते बल्कि हम सभी धर्मों को सच के रूप में स्वीकार करते हैं। मुझे गर्व है कि मैं उस देश से हूं जिसने सभी धर्मों और सभी देशों से सताए गए लोगों को अपने यहां शरण दी। मुझे गर्व है कि आपने दिल में हमने इजरायल की वह पवित्र यादें संजो कर रखी हैं जो हमलावरों ने नष्ट कर दी। गीता के श्लोक को उद्धृत कर विवेकानंद कहे थे– "जो भी मुझ

तक आता है चाहे कैसा भी हो मैं उस तक पहुंचता हूं. लोग अलग–अलग रास्ते चुनते हैं परेशानियां झेलते हैं, लेकिन आखिर में मुझ तक पहुंचते हैं। अर्थात सभी धर्मों की शिक्षाएं, सभी धर्मों के रास्ते भले ही अलग–अलग हैं लेकिन सब धर्मों का मूल वह एक सर्वशक्तिमान ही है, जो मानवता में ही प्रतिबिंबित होता है, अर्थात मनुष्यता का कल्याण ही सभी धर्मो का मूल है।

पूर्व अध्ययनों की समीक्षा

चन्द्रा, विपीन (1993)[1] द्वारा लिखित पुस्तक ''एस्से ऑन इण्डियन नेशनलिज्म'' में कहना है कि भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म स्वामी विवेकानंद के द्वारा ही हुआ है। उनकी पहली शिकागों में की गई पहली अभिव्यक्ति में ही भारतीय संस्कृति में ही एवं राष्ट्रवाद का स्पष्ट झलक दिखलाई पड़ता है। स्वामी जी का कहना था कि राष्ट्रप्रेम सच्चे देश भक्तों के लिए सर्वोपरि है।

वक्षी, एस0एस0 एवं शर्मा, के0सी0 (2007)[2] द्वारा अनुवादित पुस्तक ''इन साइक्लोपिडिया ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म'' में कहना है कि स्वामी विवेकानंद भारतीय राष्ट्रवाद के अग्रणी चिंतक थे। उनका राष्ट्रवाद भारतीय संस्कृति की मूल अवधारणाओं से संबंधित है। उनका कहना था कि राष्ट्रप्रेम के बिना जीवन अधूरा है।

सिंह, विरेन्द्र कुमार (2011) [3] द्वारा लिखित पुस्तक ''इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डियन फ्रीडम फाइट्र्स'' में कहना है कि स्वामी विवेकानंद के चिंतन का भारतीय राष्ट्रवाद अब पूर्ण रूप से भारत में नहीं रह गया है। स्वामी जी के चिंतन का राष्ट्रवाद विश्व प्रेम पर आधारित है। आज क्षेत्रिय दल एवं क्षेत्रिय राजनीतिक के कारण राष्ट्रवाद की अवधारणा पर आघात पहुँचा है।

सरकार, सुमित (1983)[4] द्वारा लिखित पुस्तक ''मॉडर्न इण्डिया 1885–1947'' में कहना है कि भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म स्वामीजी के शिकागों अभिव्यक्ति का एक स्पष्ट उदाहरण है। सभी धर्मों को साथ लेकर चलने की अवधारणा स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवाद में निहित है।

अध्ययन का उद्देश्य

स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद से संबंधित शोध आलेख का उद्देश्य निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित है

- इस अध्ययन के आधार पर स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी चिंतनों का तथ्यपरक विश्लेषण किया गया है।
- वर्त्तमान अध्ययन के आधार पर स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी विचारधारा का वर्तमान समय में प्रासंगिकता का अन्वेषन किया गया है।

अध्ययन पद्धति

यह शोध आलेख मुख्य रूप से वर्णन एवं विश्लेषणात्मक एवं ऐतिहासिक आलोचनात्मक अध्ययन पद्धति पर आधारित है। वर्त्तमान अध्ययन स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद के विविध पक्षों के अन्वेषण से संबंधित है अतः यह शोध आलेख मुख्य रूप से द्वैतियक स्रोत पर आधारित है। इस अध्ययन के लिए मूल अध्ययन स्रोत तत्कालीन पत्रा–पत्रिकाओं एवं दस्तावेज तथा विभिन्न आचार्यों द्वारा सम्पादित पुस्तकों द्वारा लिया है।

सांप्रदायिकता पर चोट

सांप्रदायिकता पर चोट करते हुए विवेकानंद बहुत प्रगतिशील हो जाते हैं। वे कहते हैं–"सांप्रदायिक कट्टरता और इसके भयानक वंशजों के धार्मिक हठ ने लंबे समय से इस खूबसूरत धरती को जकड़ रखा है। उन्होंने इस धरती को हिंसा से भर दिया है और कितनी ही बार यह धरती खून से लाल हो चुकी है। न जाने कितनी सभ्यताएं तबाह हुई, कितने देश मिटा दिए गए। यदि यह खौफनाक राक्षस नहीं होते तो मानव समाज कहीं ज्यादा बेहतर होता जितना की अभी है। धर्म संसद मे विवेकानंद पूरी दुनिया से हर तरह की कट्टरता हठधर्मिता और दुखों का विनाश करने का आह्वान किये हैं फिर चाहे यह विनाश तलवार से किया जाए अथवा कलम से। विवेकानंद के ऐसे ही धार्मिक विचार का सम्मान करते हुए सुभाष चंद्र बोस उन्हें आधुनिक भारत का निर्माता कहते हैं। जिस प्रकार की धर्म की कल्पना विवेकानंद ने की, जिसके मूल में मानव कल्याण हो, जिसमें किसी भी प्रकार की कट्टरता और हिंसा ना हो, धर्म का वही स्वरूप भारतीय संविधान के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप में भी झलकता है। वह हर प्रकार की सांप्रदायिकता और कट्टरता का विरोध करते हैं. यही उदार और सहिष्णु धर्म विवेकानंद के राष्ट्रवाद का आधार भी है।

पिछली दो शताब्दियों के दौरान राष्ट्रवाद विभिन्न चरणों से गुजरा है और सर्वाधिक आकर्षक शक्तियों में से एक के रूप में उभरा है। इसने लोगों को एकजुट करने के साथ–साथ विभाजित भी किया है। उन्नीसवीं शताब्दी में इसने यूरोप के एकीकरण तथा एशिया और अफ्रीका में उपनिवेशों की समाप्ति में प्रमुख भूमिका निभाई थी।हालांकि, वर्तमान विश्व में कट्टरपंथी राष्ट्रवाद का उदय हो रहा है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के स्थापित सम्मेलनों से संयुक्त राज्य अमेरिका का अलग होना, ब्रेक्जिट, स्कॉटलैंड की स्वतंत्रता के लिए दूसरे जनमत संग्रह की मांग इत्यादि इसके कुछ उदाहरण हैं। ऐसे में राष्ट्रवाद के एक संकीर्ण दृष्टिकोण ने अनेक समूहों में पैठ बना ली है। ये समूह दूसरों पर अपने अधिकार और अपने विशेषाधिकारों को सुनिश्चित करना चाहते हैं। ऐसा राष्ट्रवाद राष्ट्रों को विभाजित करता है, उन्हें अलग करता है और असमानता बढ़ाने वाली अर्थव्यवस्थाओं को जन्म देता है। साथ ही यह अनेक ऐसे लोगों को देश से दूर कर देता है जो देश के लिए योगदान दे सकते हैं।

आधुनिक राष्ट्रवाद की विभाजनकारी शक्तियों के विपरीत स्वामी विवेकानंद का दृष्टिकोण सार्वभौमिक पहुँच और आध्यात्मिक पहचान की एकता पर केंद्रित था। यह समय उनकी "प्रबुद्ध राष्ट्रवाद" की धारणा को आत्मसात करने का है जो इस बात पर बल देता है कि किसी एक देश का दूसरे देश पर अधिग्रहण करने का कोई आध्यात्मिक या नैतिक औचित्य नहीं हो सकता है। स्वामी विवेकानंद हर तरह की विविधता के समर्थक थे। बहुलता पर आधारित राष्ट्रवाद उनका लक्ष्य था।उनका कहना था कि–हल पकडे हुए किसानो की कुटिया से नए भारत का उदय हो। मोची मछुआरों और भंगी के दिल से नए भारत का उदय हो। पंसारी की दुकान से नए भारत का जन्म हो। बगीचों और जंगलो से उसे निकलने दो। पर्वतो और पहाडों से उसे निकलने दो। विवेकानंद जी का मानना था कि, नैसर्गिक और स्वस्थ राष्ट्रवाद का विकास तभी होगा, जब न सिर्फ धर्मों के बीच, बल्की पूरब और पश्चिम की संस्कृतियों के बीच बराबरी का आदान–प्रदान हो।

1893, में शिकागो की धर्मसभा में दिया गया विवेकानंद जी का भाषण उनकी विश्व बंधुत्व की सोच को बिलकुल स्पष्ट करता है। उनकी पहली पंक्ति थी, "अमेरिकी बहनों और भाइयों।" जो विश्व को एक सूत्र में एक दृष्टी से देखता है, ऐसे महान व्यक्ति को यदा–कदा हिन्दु राष्ट्रवाद की बहस में एक उग्र धार्मिक राष्ट्रवाद की परिकल्पना में पेश किया जाता है। यदि विवेकानंद जी के जीवन दर्शन को ध्यान से समझा जाये तो ऐसे मनगढ़ंत और भ्रामक व्यक्तत्व बिलकुल ही निराधार नजर आते हैं।आधुनिक भारत के इतिहासकार अमिय पी सेन ने अपनी किताब 'स्वामी विवेकानंद' में लिखा है कि– विवेकानंद हिंदू शब्द का इस्तेमाल व्यापक और सांस्कृतिक संदर्भों में किया करते थे। सिस्टर निवेदिता ने भी कई बार कहा है कि, जब स्वामी जी को खासतौर से हिंदू धर्म के अनुयायियों की बात करनी होती थी, तब वे 'वैदिक या वेदांतिक' शब्द का इस्तेमाल करते थे। सिस्टर निवेदिता ने अपनी किताब 'नोट्स ऑफ सम वांडरिंग विद स्वामी विवेकानंद' में उनको सांस्कृतिक संश्लेषक की उपाधी दी है।

विवेकानंद जी का राष्ट्रवाद मिश्रित और बहुलतावादी था। स्वामी

जी अपनी एक घटना का जिक्र बार–बार करते थे, जो उनकी उदार सोच को बयान करती है। जब विवेकानंद जी विश्व भ्रमण पर थे, तब वे अलमोडा पहुँचे। एक दिन वे एक दरगाह के सामने बेहोश हो गये थे, तब दरगाह की रखवाली करने वाले फकीर जुल्फिकार अली ने उनकी जान बचाई थी और उनको खाने के लिये ककडी दी थी। विवेकानंद जी अपनी मातृभूमि के उत्थान के लिये जिस राष्ट्रवाद की कल्पना करते हैं, उसके मूल में मानवतावाद, आध्यात्मिक विकास और सांस्कृतिक नवजागरण है। इसे हासिल करने के लिये उन्होने वेदांतिक दर्शन को अपना उपकरण बनाया। विवेकानंद जी जिस भूमिका को समझने की बात करते थे, वह नए मनुष्य और नए समाज की भूमिका थी। करुणा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समानता और विश्वबंधुत्व पर आधारित आधुनिक शक्तिशाली भारत के निर्माण की भूमिका थी।

शिकागो धर्मसभा के विदाई भाषण में विवेकानंद जी ने कहा था, धर्मों के बीच एकता के बारे में बहुत कुछ कहा गया है लेकिन अगर कोई ये सोचता है कि एक धर्म के दूसरे धर्म पर जीत स्थापित करने से एकता स्थापित होगी तो ये गलत है। मैं उन्हे कहना चाहता हूँ कि बंधु आप गलत उम्मीद लगा बैठे हैं। क्या मुझे यह उम्मीद लगानी चाहिये कि क्रिश्चियन हिंदू हो जाये या फिर हिंदू और बौद्धों को क्रिश्चियन हो जाना चाहिये।'स्वामी विवेकानंद एंड मॉडर्नाइजेशन ऑफ हिन्दुज्म' में हिलटुड रुस्टाव ने लिखा है कि, विवेकानंद एक ऐसा समाज चाहते थे, जहाँ बडे से बडा सत्य उद्घाटित हो सके और हर इंसान को देवत्व का अहसास हो। विवेकानंद सच को अपना देवता मानते थे और कहते थे कि पूरी दुनिया मेरा देश है। राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता उनके लिये किसी संकीर्णता का नाम नही था।

विवेकानंद जी तो ऐसे राष्ट्रवादी संत थे, जिन्हे भारत की मिट्टी के कण–कण से प्यार था। उनका कहना था, मैं भारतीय हूँ और हर भारतीय मेरा भाई है। अज्ञानी हो या फिर गरीब हो, अभावग्रस्त हो या ब्राह्मण या फिर अछूत हो वो मेरा भाई है। भारत का समाज मेरे बचपन का पालना है और मेरे जवानी के आनंद का बगीचा है। मेरे बुढापे की काशी है। भारत की मिट्टी मेरे लिये सबसे बडा स्वर्ग है। ऐसे सात्विक और विश्व बंधुत्व की भावना वाले स्वामी विवेकानंद जी का नाम जैसे ही जहन में आता है, मन में उनके प्रति श्रद्धा की अनुभूति होती है। भारत के नैतिक मूल्यों को विश्व के कोने–कोने में पहुँचाने वाले स्वामी विवेकानंद जी के राष्ट्रीय विचार हमारे अंदर देशप्रेम की भावना का संचार करते हैं। विदेशों में भारतीय संस्कृति की सुगंध फैलाने वाले स्वामी विवेकानंद जी को शत् शत् वंदन और नमन करते हुए उनकी कही बात, 'मानव सेवा ही ईश्वर सेवा है' को जीवन में अपनाने का संकल्प करते हैं।

भारतीय पुनर्जागरण के महान संत

स्वामी विवेकानन्द भारतीय पुनर्जागरण के महान संत, अध्ययनशील संन्यासी, गंभीर विचारक, धर्म तत्व ज्ञाता एवं एक महान ओजस्वी वक्ता और महान विभूति थे। वे 19वीं शताब्दी के प्राचीन भारतीय ऋषि–महर्षियों की परंपरा के एक ऐसे क्रांतिकारी संन्यासी थे, जिन्होंने अपने उपदेशों और क्रांतिकारी विचारों के माध्यम से हिन्दुओं में राष्ट्रीय चेतना स्वाभिमान की भावना उत्पन्न कर उन्हें भारत राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा के लिए सतत् संघर्ष करते रहने की प्रेरणा दी। स्वामी जी के तेजस्वी व्यक्तित्त्व और ओजस्वी वाणी में ऐसा विलक्षण आकर्षण था कि साधारण व्यक्ति से लेकर अग्रणी बुद्धिजीवी तक उनके प्रति श्रद्धावनत हो उठते थे। अल्प समय में ही स्वामी जी ने हिन्दू धर्म और भारतीय संस्कृति की विजय पताका सात समुद्र पार के अनेक देशों में फहराकर अपने भारत राष्ट्र को गौरवान्वित करने में सफलता प्राप्त की थी। 12 जनवरी, 1863 को कोलकाता में सुविख्यात विधिवेत्ता विश्वनाथ दत्त तथा भुवनेश्वरी देवी के पुत्र के रूप में जन्में, 'नरेन्द्र' का प्रादुर्भाव ही अपनी विलक्षण प्रतिभा तथा तेजोमय व्यक्तित्व के माध्यम से विदेशी दासता के बंधनों में जकड़े हुए भारत राष्ट्र में स्वाभिमान की भावना का संचार करने व संसार भर में सनातन धर्म के आध्यात्मिक मूल्यों का संदेश पहुंचाने के लिए हुआ था । अपने अल्पजीवन काल (1863–1902) केवल 39 वर्ष की आयु में इस विलक्षण ओजस्वी संन्यासी ने जिस प्रकार संसारव्यापी ख्याति प्राप्त की थी, वह अन्य किसी को प्राप्त नहीं हुई। प्रसिद्ध फ्रांसीसी दार्शनिक रोमां रोलां ने उनके विषय में ठीक ही लिखा था– ''उनके द्वितीय होने की कल्पना करना असंभव है। वे जहाँ भी पहुंचे अद्वितीय रहे। हर कोई उनमें अपने नेता का, मार्गदर्शक का दर्शन करता था। वे ईश्वर के प्रतिनिधि थे और सब पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेना ही उनकी विशिष्टता थी।''

नरेन्द्रनाथ दत्त से स्वामी विवेकानन्द बनने तक की उनकी यात्रा न केवल मानवीय दुर्बलताओं पर विजय है, बल्कि अनंत आस्था के प्रवाह में अवगाहन है, राष्ट्र–धर्म–संस्कृति के उन्नयन का मंत्र भी है। निराशा, आत्मबोधहीनता और अज्ञान से निकलकर किस तरह जिजीविषा के साथ निर्भय होकर अमरत्व की ओर बढ़े, हिन्दू चिंतन विशेषकर उपनिषदों के आह्वान को बोधगम्य बनाकर जब उन्होंने प्रस्तुत किया, तो न केवल ईसाइयत की श्रेष्ठता के अहंकार पर चढ़कर आई साम्राज्यवादी निरंकुशता का दंभ चूर–चूर हो गया, बल्कि यूरोप और अमरीकावासी तो उन्मत्त होकर उनके पीछे दौड़ने लगे मानों उन्हें कोई त्राता मिल गया हो। उनके विदेश प्रवास काल में घटित ऐसे अनेक प्रसंग और वहाँ के समाचार पत्रों में प्रकाशित स्वामी जी के चुम्बकीय आकर्षण की यशोगाथा वहाँ उनका जादू छा जाने के साक्षी हैं। प्रेम, सेवा और बंधुत्व के मार्ग पर चलकर समस्त मानवता के लिए स्वार्थ–भेद–संघर्ष से परे सुखमय, कल्याणकारी व शांतिपूर्ण जीवन का उनका संदेश पाश्चात्य भोगवादी और विभेदकारी सभ्यता से तप्त हृदयों के लिए मानों अमृतवर्षा जैसा था। उनके सम्मोहन में बंधा समस्त यूरोप व अमरीका धन्य–धन्य कह उठा।

जिस समय स्वामी विवेकानन्द का आविर्भाव हुआ, उस समय देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था। देश के उस पराधीनता काल में भी किसी भी तरह की आत्महीनता की बजाय भारत को, हिन्दू चिंतन को विश्व में प्रतिष्ठा दिलाकर, भारत को पराधीन कर विजय के दंभ में जी रही यूरोपीय जातियों व देशों को फटकार लगाकर एक दिग्विजयी योद्धा की भांति स्वामी विवेकानन्द भारत लौटे तो देश का जनमानस गर्वोन्नत होकर उनके स्वागत में पलक–पांवड़े बिछाकर खड़ा था, लेकिन स्वामी जी मद्रास के समुद्रतट पर जहाज से उतर कर मातृभूमि की रज में लोट–पोट हो रहे थे, आनंद अश्रुओं से विगलित अवस्था में वे बेसुध से हो गए, मानों वर्षों से माँ की गोद से बिछुड़ा कोई अबोध बालक माँ के अंक में आकर विश्रांति पा गया हो। मातृभूमि के स्पर्श से उनके आनंद का तो पारावार ही नहीं था, वर्षों भोगवादी पश्चिम की भूमि पर विचरण कर लौटे स्वामी विवेकानन्द मानो भारत की रज के स्पर्श से चिरंतन शुचिता के संस्कार में अवगाहन कर रहे थे। ऐसी भी उनकी भारत भक्ति, मातृभूमि के प्रति अखंड साधना और हिन्दू चिंतन, भारतीय जीवनमूल्यों–संस्कारों के प्रति अडिग विश्वास व अगाध आस्था।

उन्होंने भारत भ्रमण कर निरंतर देशवासियों को जगाया, अपने समाज जीवन की कुरीतियों, मानसिक जड़ता और अंधविश्वासों के कुंहासे को चीरकर अपने स्वत्व को पहचानने व अपने पूर्वजों की थाती को संभालने का आह्वान किया। भारत माता को साक्षात देवी मानकर उसके उत्कर्ष के लिए उसकी सेवा में सर्वस्व न्योछावर कर देने की भावना, दरिद्र नारायण की सेवा, स्त्री चेतना का जागरण, शिक्षा का प्रसार, राष्ट्रोन्नयन में युवाओं की भूमिका, उनका चरित्र निर्माण, उनका बलशाली बनना, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का बोध, भारत की आध्यात्मिक चेतना का प्रवाह, जाति, पंथ भेद से ऊपर उठकर सामाजिक समरसता व लोक कल्याण के द्वारा भारत का उत्थान, राष्ट्रीय एकात्मभाव का जागरण, हिन्दू संस्कृति का गौरवबोध, झोपड़ियों में से भारत उदय का आर्थिक चिंतन, ऐसी बहुआयामी

सार्वकालिक विचार दृष्टि स्वामी जी ने हमें दी जो हमारे वैयक्तिक, सामाजिक व राष्ट्रजीवन के सर्वतोमुखी उत्कर्ष की भावभूमि है। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में लिखा है कि –''अभिनव भारत को जो कुछ कहना था वह विवेकानन्द के मुख से उद्गीर्ण हुआ। अभिनव भारत को जिस दिशा की ओर जाना था, उसका स्पष्ट संकेत विवेकानन्द ने दिया। विवेकानन्द वह सेतु हैं, जिस पर प्राचीन और नवीन भारत परस्पर आलिंगन करते हैं। विवेकानन्द वह समुद्र हैं, जिसमें धर्म और राजनीति, राष्ट्रीयता और अंतराष्ट्रीयता तथा उपनिषद् और विज्ञान, सबके सब समाहित होते हैं।''रवीन्द्रनाथ ने कहा है, 'यदि काई भारत को समझना चाहता है, तो उसे विवेकानन्द को पढ़ना चाहिए।'' महर्षि अरविंद का वचन है कि 'पश्चिमी जगत में विवेकानन्द को जो सफलता मिली, वही इस बात का प्रमाण है कि भारत केवल मृत्यु से बचने को नहीं जगा है, वरन वह विश्व विजय करके दम लेगा।'' मौजूदा समय मे समाज में राष्ट्रवाद के नाम पर विभिन्न प्रकार की कट्टर धार्मिक गतिविधियां जारी हैं। अलग–अलग प्रकार के संगठन इस कथित राष्ट्रवाद के विचार को पुष्पित पल्लवित कर रहे हैं। लेकिन उनमें से अधिकांश संगठन जिस राष्ट्रवाद की अवधारणा को आगे लेकर आते हैं वह अवधारणा बहुसंख्यक समाज के धार्मिक हितों और प्रतीकों को आगे करके गढ़ी जाती है, जिसमें धार्मिक सहिष्णुता का तत्व विलीन होता दिखता है। वह विपरीत मत के धर्मावलंबियों को सुरक्षा का भाव ना देकर, एक अज्ञात भय से भर देता है। इस प्रकार राष्ट्रवाद के नाम पर जिस प्रकार की धार्मिक अवधारणाओं को आज आगे किया जा रहा है। धार्मिक आधार पर मॉब लिंचिंग की घटनाएं हो रही हैं जिसकी पराकाष्ठा ने कानून के शासन के समक्ष चुनौतियां पेश कर दी है मजबूरन जिस पर सर्वोच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़ रहा है ऐसा किसी राष्ट्रीय शर्म से कम नहीं है।

निष्कर्ष

एक बार फिर विवेकानन्द की सिंह–गर्जना भारतीयता से विमुख बंद दिमागों की खिड़की खोले, उनके अंतःकरण में छाए वैचारिक विभ्रम के कुंहासे को छांट दे, भारत भक्ति से ओत–प्रोत हृदयों में आशा व विश्वास का संचार करे और भारत फिर अंगड़ाई लेकर 'इंडिया' को मात देता हुआ उठ खड़ा हो। इसके लिए आवश्यकता है कि स्वामी विवेकानन्द के विचार केवल बौद्धिक चिंतन तक ही न रहें, बल्कि व्यावहारिक धरातल पर भी साकार हों और देश का चित्र बदले, यह आवश्यक है। भारत का जो चित्र स्वामी जी की अंतश्चेतना में उभरता था, वह केवल सुखी, समृद्ध, शक्तिशाली भारत का नहीं था, बल्कि एक संपन्न, सशक्त, स्वाभिमानी राष्ट्र के रूप में भारत विश्व का मार्गदर्शन करे, अपने गौरव बोध के साथ समूची मानव जाति को सुख–शांति व कल्याण का मार्ग दिखाए, भारत माता फिर से विश्वगुरू के सिंहासन पर आरूढ़ हो विश्व पूज्य बने। यह संकल्प तभी पूर्ण होगा जब हम स्वामी विवेकानन्द के विचार को 'मनसा–वाचा–कर्मणा' जिएंगे। राष्ट्रवाद के नाम पर ऐसी गतिविधियां, निश्चित रूप से विवेकानंद के बहु–सांस्कृतिक और सहिष्णु राष्ट्रवाद पर चोट करते प्रतीत होती हैं। यही आज के समय की सबसे बड़ी चुनौती भी है। शिकागो धर्म सम्मेलन में विवेकानंद द्वारा धर्म के जिन मूल तत्व को रेखांकित किया, यदि आज हम उन्हें समझने लगें तो, धर्म के आधार पर राष्ट्र के समक्ष उपस्थित समक्ष समस्त खतरे स्वतः समाप्त हो जाएंगे और इस प्रकार की समझ का विकसित होना ही विवेकानंद को सच्ची श्रद्धांजली होगी।

सदर्भ सूची

1. Chandra, Bipin. Essays on Indian Nationalism, Har - Anand Publications Pvt. Ltd., New Delhi 1993, 65-69.
2. Bakshi SR, Sharma KC. (ed.) Encyclopedia of Indian Nationalism, Vol. IX, Vista International Publishing House, New Delhi 2007, 122-126.
3. Singh, Birendra Kumar. Encyclopedia of Indian Freedom Fighters, Vol. VIII, Centrum Press, New Delhi 2011, 145-150.
4. Sarkar Sumit. Modern India 1885-1947, Mac Millan India Press, Madras 1983.
5. Rathod PB Modern Indian Political Thinkers, Common Wealth Publishers, New Delhi 2005, 67-71.
6. Sharma LP. Indian National Movement, Lakshmi Narain Agarwal Educational Publishers, Agra 1996, 64-68.